हिन्दी-जैनचरितमाला—नं० ५

स्व० ब्रह्मचारी नेमिदत्तके बनाये

संस्कृत

सुकुमाल-चरित-सार

का

हिन्दी रूपान्तर।

कर्त्ता—

उदयलाल काशलीवाल।

प्रकाशक—

हिन्दी-जैनसाहित्यप्रसारक कार्यालय,

चन्दावाड़ी, गिरगाव—बम्बई.

मई, सन् १९१५ ईस्वी.

प्रथम संस्करण १०००] [कीमत डेढ आना।

Printed by G N Kulkarni, at the Karnatak Press,
No 7, Girgom Back Road
And
Published by Udailal Kashliwal, Proprietor, Hidi-Jain
Sahitya Prasarak Karyalaya, Chandawadi, Girgaon,
Bombay

श्री वीतरागाय नमः

सुकुमाल-चरित-सार
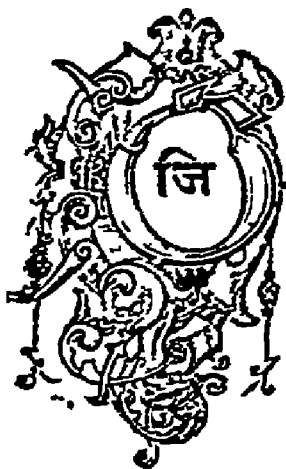
जिनके नाम मात्रहीका ध्यान करनेसे हर प्रकारकी धन-सम्पत्ति प्राप्त हो सकती है, उन परम पवित्र जिनभगवान्को नमस्कार कर सुकुमाल मुनिकी कथा लिखी जाती है।

अतिवल कौशाम्बीके जब राजा थे, तबहीका यह आख्यान है। यहाँ एक सोमशर्मा पुरोहित रहता था। इसकी स्त्रीका नाम काश्यपी था। इसके अग्निभूत और वायूभूति नामके दो लड़के हुए। मा-बापके अधिक लाड़ले होनेसे ये कुछ पढ़-लिख न सके। और सच है पुण्यके विना किसीको विद्या आती भी तो नहीं। कालकी विचित्र गतिसे सोमशर्माकी असमयमें ही मौत हो गई। ये दोनों भाई तब निरे मूर्ख थे। इन्हें मूर्ख देखकर अतिवलने इनके पिताका पुरोहित-पद, जो इन्हें मिलता, किसी औरको दे दिया। यह ठीक है कि मूर्खोंका कहीं आदर-सत्कार नहीं होता। अपना अपमान

हुआ देखकर इन दोनों भाइयोंको बड़ा दुःख हुआ। तब इन की कुछ अकल ठिकाने आई। अब इन्हें कुछ लिखने पढ़नेकी सूझी। ये राजगृहमें अपने काका सूर्यमित्रके पास गये और अपना सब हाल इन्होंने उनसे कहा। इनकी पढ़नेकी इच्छा देखकर सूर्यमित्रने स्वयं इन्हें पढ़ाना शुरू किया और कुछ ही वर्षोंमें इन्हें अच्छा विद्वान् बना दिया। दोनों भाई जब अच्छे विद्वान् हो गये तब ये पीछे अपने शहर लौट आये। आकर इन्होंने अतिबलको अपनी विद्याका परिचय कराया। अतिबल इन्हें विद्वान् देखकर बहुत खुश हुआ और इनके पिताका पुरोहित-पद उसने पीछा इन्हें ही दे दिया। सच है सरस्वतीकी कृपासे संसारमें क्या नहीं होता!

एक दिन सन्ध्याके समय सूर्यमित्र सूर्यको अर्घ चढ़ा रहा था। उसकी उँगुलीमें राजकीय एक रत्नजड़ी बहुमूल्य अँगूठी थी। अर्घ चढ़ाते समय वह अँगूठी उँगुलीमेंसे निकलकर महलके नीचे तालावमें जा गिरी। भाग्यसे वह एक खिले हुए कमलमें पड़ी। सूर्य अस्त होने पर कमल मुँद गया। अँगूठी कमलके अन्दर बन्द हो गई। जब वह पूजा-पाठ करके उठा और उसकी नजर उँगुली पर पड़ी तब उसे मालूम हुआ कि अँगूठी कहीं गिर पड़ी। अब तो उसके डरका कुछ ठिकाना न रहा। राजा जब अँगूठी माँगेगा तब उसे क्या जवाब दूँगा, इसकी उसे बड़ी चिंता होने लगी। अँगूठीकी शोधके लिए इसने बहुत कुछ यत्न किया, पर इसे उसका कुछ पता न चला। तब किसीके कहनेसे यह अवधिज्ञानी सुधर्म मुनिके पास गया और हाथ जोड़कर इसने

उनसे अँगूठीके बावत पूछा कि प्रभो, क्या कृपाकर मुझे आप यह बतलावेंगे कि मेरी अँगूठी कहाँ चली गई और हे करुणाके समुद्र, वह कैसे प्राप्त होगी? मुनिने उत्तरमें यह कहा कि सूर्यको अर्घ देते समय तालावमें एक खिले हुए कमलमें अँगूठी गिर पड़ी है। वह सवेरे मिल जायगी। वही हुआ। सूर्योदय होते ही जैसे कमल खिला सूर्यमित्रको उसमें अँगूठी मिली। सूर्यमित्र बड़ा खुश हुआ। उसे इस बातका बड़ा अचंभा होने लगा कि मुनिने यह बात कैसे बतलाई? हो न हो, उनसे अपनेको भी यह विद्या सीखनी चाहिए। यह विचार कर सूर्यमित्र, मुनिराजके पास गया। उन्हें नमस्कार कर उसने प्रार्थना की कि हे योगिराज, मुझे भी आप अपनी विद्या सिखा दीजिए, जिससे मैं भी दूसरेके ऐसे प्रश्नोंका उत्तर दे सकूँ। आपकी मुझ पर बड़ी कृपा होगी, यदि आप मुझे अपनी यह विद्या पढ़ा देंगे। तब मुनिराजने कहा–भाई, मुझे इस विद्याके सिखानेमें कोई इंकार नहीं है। पर बात यह है कि बिना जिन दीक्षा लिए यह विद्या आ नहीं सकती। सूर्यमित्र तब केवल विद्याके लोभसे दीक्षा लेकर मुनि हो गया। मुनि होकर इसने गुरुसे विद्या सिखानेको कहा। सुधर्म मुनिराजने तब सूर्यमित्रको मुनियोंके आचार-विचारके शास्त्र तथा सिद्धान्त-शास्त्र पढ़ाये। अब तो एकदम सूर्यमित्रकी आँखें खुल गईं। यह गुरुके उपदेश रूपी दियेके द्वारा अपने हृदयके अज्ञानान्धकारको नष्ट कर जैनधर्मका अच्छा विद्वान् हो गया। सच है, जिन भव्य पुरुषोंने सच्चे मार्गको बतानेवाले और संसारके अकारण बन्धु गुरुओंकी भक्ति

सहित सेवा-पूजा की है, उनके सब काम नियमसे सिद्ध हुए हैं।

जब सूर्यमित्र मुनि अपने मुनिधर्ममें खूब कुशल हो गये तब वे गुरुकी आज्ञा लेकर अकेले ही विहार करने लगे। एक बार वे विहार करते हुए कौशाम्बीमें आये। अग्निभूतिने इन्हें भक्तिपूर्वक दान दिया। उसने अपने छोटे भाई वायुभूतिसे बहुत प्रेरणा और आग्रह इस लिए किया कि वह सूर्यमित्र मुनिकी वन्दना करे—उसे जैनधर्मसे कुछ प्रेम हो। कारण वह जैनधर्मसे सदा विरुद्ध रहता था। पर अग्निभूतिके इस आग्रहका परिणाम उलटा हुआ। वायूभूतिने और खिसियाकर मुनिकी अधिक निन्दा की और उन्हें बुरा भला कहा। सच है, जिन्हें दुर्गतियोंमें जाना होता है, प्रेरणा करने पर भी ऐसे पुरुषोंका श्रेष्ठ धर्मकी ओर झुकाव नहीं होता; किन्तु वह उलटा पाप-कीचड़में अधिक अधिक फँसता है। अग्निभूतिको अपने भाईकी ऐसी दुर्बुद्धि पर बड़ा दुःख हुआ। और यही कारण था कि जब मुनिराज आहारकर वनमें गये तब अग्निभूति भी उनके साथ साथ चला गया और वहाँ धर्मोपदेश सुनकर वैराग्य होजानेसे दीक्षा लेकर वह भी तपस्वी हो गया। अपना और दूसरोंका हित करना अबसे अग्निभूतिके जीवनका उद्देश हुआ।

अग्निभूतिके मुनि हो जानेकी बात जब इसकी स्त्री सती सोमदत्ताको ज्ञात हुई तो उसे अत्यन्त दुःख हुआ। उसने वायुभूतिसे जाकर कहा—देखो, तुमने मुनिको वन्दना न कर उनकी बुराई की, सुनती हूँ इससे दुखी होकर तुम्हारे

भाई भी मुनि हो गये। यदि वे अब तक मुनि न हुए हों तो चलो उन्हें तुम हम समझा लावें। वायुभूतिने गुस्सा होकर कहा—हाँ तुम्हें गर्ज हो तो तुम भी उस बदमाश नंगेके पास जाओ! मुझे तो कुछ गर्ज नहीं है। यह कहकर वायुभूति अपनी भौजीके एक लात मारकर चलता बना। सोमदत्ताको उसके मर्मभेदी वचनोंको सुनकर बड़ा दुःख हुआ। उसे क्रोध भी अत्यन्त आया। पर अबला होनेसे वह उस समय कर कुछ नहीं सकी। तब उसने निदान किया कि पापी, तूने जो इस समय मेरा मर्म भेदा है और मुझे लातोंसे ठुकराया है, और इसका बदला स्त्री होनेसे मैं इस समय न भी ले सकी तो कुछ चिन्ता नहीं, पर याद रख इस जन्ममें नहीं तो दूसरे जन्ममें सही, पर बदला लूँगी अवश्य। और तेरे इसी पाँवको, जिससे कि तूने मुझे लात मारी है और मेरे हृदय भेदनेवाले तेरे इसी हृदयको मैं खाऊँगी तभी मुझे सन्तोष होगा। ग्रन्थकार कहते हैं कि ऐसी मूर्खताको धिक्कार है जिसके वश हुए प्राणी अपने पुण्य-कर्मको ऐसे नीच निदानों द्वारा भस्म कर डालते हैं।

'इस हाथ दे उस हाथ ले' इस कहावतके अनुसार तीव्र पापका फल भी प्रायः तुरत मिल जाता है। वायुभूतिने मुनिनिन्दा द्वारा जो तीव्र पाप-कर्म बाँधा, उसका फल उसे बहुत जल्दी मिल गया। पूरे सात दिन भी न हुए होंगे कि वायुभूतिके सारे शरीरमें कोढ़ निकल आया। सच है, जिनकी सारा संसार पूजा करता है और जो धर्मके सच्चे मार्गको दिखानेवाले हैं ऐसे महात्माओंकी निन्दाकरने-

वाला पापी पुरुष किन महाकष्टोंको नहीं सहता। वायुभूति कोढ़के दुःखसे मरकर कौशाम्बीमें ही एक नटके यहाँ गधा हुआ। गधा मरकर वह जंगली सूअर हुआ। इस पर्यायसे मरकर इसने चम्पापुरीमें एक चाण्डालके यहाँ कुत्तीका जन्म धारण किया। कुत्ती मरकर चम्पापुरीमें ही एक दूसरे चाण्डालके यहाँ लड़की हुई। यह जन्महीसे अन्धी थी। इसका सारा शरीर वदबू कर रहा था। इस लिए इसके माता पिताने इसे छोड़ दिया। पर भाग्य सभीका वलवान् होता है। इस लिए इसकी भी किसी तरह रक्षा हो गई। यह एक जाँबूके झाड़ नीचे पड़ी पड़ी जाँबू खाया करती थी।

सूर्यमित्र मुनि अग्निभूतिको साथ लिए हुए भाग्यसे इस ओर आ निकले। उस जन्मकी दुःखिनी लड़कीको देखकर अग्निभूतिके हृदयमें कुछ मोह और कुछ दुःख हुआ। उन्होंने गुरुसे पूछा—प्रभो, इस लड़कीकी दशा वड़ी कष्टमें है। यह कैसे जी रही है? ज्ञानी सूर्यमित्र मुनिने कहा—तुम्हारे भाई वायुभूतिने धर्मसे पराङ्मुख होकर जो मेरी निन्दा की थी, उसी पापके फलसे उसे कई भव पशुपर्यायमें लेना पड़े। अन्तमें वह कुत्तीकी पर्यायसे मरकर यह चाण्डालकन्या हुई है। पर अब इसकी उमर वहुत थोड़ी रह गई है। इस लिए जाकर तुम इसे व्रत लिवाकर संन्यास दे आओ। अग्निभूतिने वैसा ही किया। उस चाण्डालकन्याको पाँच अणुव्रत देकर उन्होंने संन्यास लिवा दिया।

चाण्डालकन्या मरकर व्रतके प्रभावसे चम्पापुरीमें नागशर्मा ब्राह्मणके यहाँ नागश्री नामकी कन्या हुई। एक

दिन नागश्री वनमें नागपूजा करनेको गई थी। पुण्यसे सूर्यमित्र और अग्निभूति मुनि भी विहार करते हुए इस ओर आ गये। उन्हें देखकर नागश्रीके मनमें उनके प्रति अत्यन्त भक्ति हो गई। वह उनके पास गई और हाथ जोड़कर उनके पाँवोंके पास बैठ गई। नागश्रीको देखकर अग्निभूति मुनिके मनमें कुछ प्रेमका उदय हुआ। और होना उचित ही था। क्योंकि थी तो वह उनके पूर्वजन्मकी भाई न? अग्निभूति मुनिने इसका कारण अपने गुरुसे पूछा। उन्होंने प्रेम होनेका कारण जो पूर्व जन्मका भातृ-भाव था, वह बता दिया। तब अग्निभूतिने उसे धर्मका उपदेश किया और सम्यक्त्व तथा पाँच अणुव्रत उसे ग्रहण करवाये। नागश्री व्रत ग्रहणकर जब जाने लगी तब उन्होंने उससे कह दिया कि हाँ देख बच्ची, तुझसे यदि तेरे पिताजी इन व्रतोंको लेनेके लिए नाराज हों तो तू हमारे व्रत हमें ही आकर सौंप जाना। सच है, मुनि लोग वास्तवमें सच्चे मार्गके दिखानेवाले होते हैं।

इसके बाद नागश्री उन मुनिराजोंके भक्तिसे हाथ जोड़कर और प्रसन्न होती हुई अपने घर पर आ गई। नागश्रीके साथकी और और लड़कियोंने उसके व्रत लेनेकी बातको नागशर्मासे जाकर कह दिया। नागशर्मा तब कुछ क्रोधकासा भाव दिखाकर नागश्रीसे बोला—बच्ची, तू बड़ी भोली है, जो झटसे हरएकके बहकानेमें आ जाती है। भला, तू नहीं जानती कि अपने पवित्र ब्राह्मण-कुलमें उन नंगे मुनियोंके दिये व्रत नहीं लिये जाते। वे अच्छे लोग नहीं होते। इस लिए उनके

व्रत तू छोड़ दे। तव नागश्री वोली—तो पिताजी, उन मुनियोंने मुझे आते समय यह कह दिया था कि यदि तुझसे तेरे पिताजी इन व्रतोंको छोड़ देनेके लिए आग्रह करें तो तू पीछे हमारे व्रत हमें ही दे जाना। तव आप चलिए मैं उन्हें उनके व्रत दे आती हूँ। सोमशर्मा नागश्रीका हाथ पकड़े क्रोधसे गुर्राता हुआ मुनियोंके पास चला। रास्तेमें नागश्रीने एक जगह कुछ गुल-गपाड़ा होता सुना। उस जगह वहुतसे लोग इकट्ठे हो रहे थे और एक मनुष्य उनके वीचमें वँधा हुआ पड़ा था। उसे कुछ निर्दयी लोग वड़ी क्रूरतासे मार रहे थे। नागश्रीने उसकी यह दशा देखकर सोमशर्मासे पूछा—पिताजी, वेचारा यह पुरुष इस प्रकार निर्दयतासे क्यों मारा जा रहा है? सोमशर्मा वोला—वची, इस पर एक वनियेके लड़के वरसेनका कुछ रुपया लेना था। उसने इससे अपने रुपयों तकादा किया। इस पापीने उसे रुपया न देकर जानसे मार डाला। इस लिए उस अपराधके वदले अपने राजा साहवने इसे प्राणदंडकी सजा दी है, और वह योग्य है। क्योंकि एकको ऐसी सजा मिलनेसे अव दूसरा कोई ऐसा अपराध न करेगा। तव नागश्रीने जरा जोर देकर कहा—तो पिताजी, यही व्रत तो उन मुनियोंने मुझे दिया है, फिर आप उसे क्यों छुड़ानेको कहते हैं? सोमशर्मा लाजवाव होकर वोला—अस्तु पुत्री, तू इस व्रतको न छोड़, चल वाकीके व्रत तो उनके उन्हें दे आवें। आगे चलकर नागश्रीने एक और पुरुषको वँधा देखकर पूछा—और पिताजी, यह पुरुष क्यों वाँधा गया है? सोमशर्माने कहा—पुत्री, यह झूठ वोलकर लोगोंको ठगा करता था।

इसके फन्देमें फँसकर बहुतोंको दर-दरका भिखारी बनना पड़ा है। इस लिए झूठ बोलनेके अपराधमें इसकी यह दशा की जा रही है। तब फिर नागश्रीने कहा—तो पिताजी, यही व्रत तो मैंने भी लिया है। अब तो मैं उसे कभी नहीं छोडूँगी। इसी प्रकार चोरी, परस्त्री, लोभ आदिसे दुःख पाते हुए मनुष्योंको देखकर नागश्रीने अपने पिताको लाजवाब कर दिया और व्रतोंको नहीं छोड़ा। तब सोमशर्माने हार खाकर कहा—अच्छा, यदि तेरी इच्छा इन व्रतोंको छोड़नेकी नहीं है तो न छोड़, पर तू मेरे साथ उन मुनियोंके पास तो चल। मैं उन्हें दो बातें कहूँगा कि तुम्हें क्या अधिकार था जो तुमने मेरी लड़कीको बिना मेरे पूछे व्रत दे दिये? फिर वे आगेसे किसीको इस प्रकार व्रत न दे सकेंगे। सच है, दुर्जनोंको कभी सत्पुरुषोंसे प्रीति नहीं होती। तब ब्राह्मण देवता अपनी होश निकालनेको मुनियोंके पास चले। उसने उन्हें दूरसे ही देखकर गुस्सेमें आ कहा—क्योंरे नंगेओ! तुमने मेरी लड़कीको व्रत देकर क्यों ठग लिया? बतलाओ, तुम्हें इसका क्या अधिकार था? कवि कहता है कि ऐसे पापियोंके विचारोंको सुनकर बड़ा ही खेद होता है। भला, जो व्रत, शील, पुण्यके कारण हैं, उनसे क्या कोई ठगाया जा सकता है? नहीं। सोमशर्माको इस प्रकार गुस्सा हुआ देखकर सूर्यमित्र मुनि बड़ी धीरता और शान्तिके साथ बोले—भाई, जरा धीरज धर, क्यों इतनी जल्दी कर रहा है। मैंने इसे व्रत दिये हैं, पर अपनी लड़की समझकर, और सच पूछो तो यह है भी मेरी ही लड़की। तेरा तो इस पर कुछ

भी अधिकार नहीं है। तू भले ही यह कह कि यह मेरी लड़की है, पर वास्तवमें यह तेरी लड़की नहीं है। यह कहकर सूर्यमित्र मुनिने नागश्रीको पुकारा। नागश्री झटसे आकर उनके पास बैठ गई। अब तो ब्राह्मण देवता बड़े घबराये। वे 'अन्याय' 'अन्याय' चिल्लाते हुए राजाके पास पहुँचे और हाथ जोड़कर बोले—देव, नंगे साधुओंने मेरी नागश्री लड़कीको जबरदस्ती छुड़ा लिया। वे कहते हैं कि यह तेरी लड़की नहीं, किन्तु हमारी लड़की है। राजाधिराज, सारा शहर जानता है कि नागश्री मेरी लड़की है। महाराज, उन पापियोंसे मेरी लड़की दिलवा दीजिए। सोमशर्माकी बातसे सारी राज-सभा बड़े विचारमें पड़ गई। राजाकी भी अकलमें कुछ न आया। तब वे सबको साथ लिए मुनिके पास आये और उन्हें नमस्कार कर बैठ गये। फिर यही झगड़ा उपस्थित हुआ। सोमशर्मा तो नागश्रीको अपनी लड़की बताने लगा और सूर्यमित्र मुनि अपनी। मुनि बोले—अच्छा, यदि यह तेरी लड़की है तो बतला तूने इसे क्या पढ़ाया? और सुन, मैंने इसे सब शास्त्र पढ़ाया है, इस लिए मैं अभिमानसे कहता हूँ कि यह मेरी ही लड़की है। तब राजा बोले—अच्छा प्रभो, यह आपहीकी लड़की सही, पर आपने इसे जो पढ़ाया है उसकी परीक्षा इसके द्वारा दिलवाइए। जिससे कि हमें विश्वास हो। तब सूर्यमित्र मुनि अपने वचनरूपी किरणों द्वारा लोगोंके चित्तमें ठसे हुए मूर्खतारूप गाढ़े अन्धकारको नाश करते हुए बोले—हे नागश्री—हे पूर्वजन्ममें वायुभूतिका भव धारण करनेवाली पुत्री, तुझे मैंने जो पूर्व-

जन्ममें कई शास्त्र पढ़ाये हैं, उनकी इस उपस्थित मंडली-के सामने तू परीक्षा दे । सूर्यमित्र मुनिका इतना कहना हुआ कि नागश्रीने जन्मान्तरका पढ़ा-पढ़ाया सव विषय सुना-दिया । राजा तथा और सव मंडलीको इससे वड़ा अचंभा हुआ । उन्होंने मुनिराजसे हाथ जोड़कर कहा—प्रभो, नाग-श्रीकी परीक्षासे उत्पन्न हुआ विनोद हृदयभूमिमें अठखेलियाँ कर रहा है। इस लिए कृपाकर आप अपने और नागश्रीके सम्वन्धकी सव वातें खुलासा कहिए । तव अवधिज्ञानी सूर्यमित्र मुनिने वायुभूतिके भवसे लगाकर नागश्रीके जन्म-तककी सव घटना उनसे कह सुनाई । सुनकर राजाको वड़ा आश्चर्य हुआ । उन्हें यह सव मोहकी लीला जान पड़ी। मोहको ही सव दुःखका मूल कारण समझकर उन्हें वड़ा वैराग्य हुआ । वे उसी समय और भी वहुतसे राजाओंके साथ जिनदीक्षा ग्रहण कर गये । सोमशर्मा भी जैनधर्मका उपदेश सुनकर मुनि हो गया और तपस्या कर अच्युत स्वर्गमें देव हुआ । इधर नागश्रीको भी अपना पूर्वका हाल सुनकर वड़ा वैराग्य हुआ । वह दीक्षा लेकर आर्यिका हो गई और अन्तमें शरीर छोड़कर तपस्याके फलसे अच्युत स्वर्गमें महर्द्धिक देव हुई। अहा ! संसारमें गुरु चिन्तामणिके समान है, सवसे श्रेष्ट हैं। यही कारण है कि जिनकी कृपासे जीवोंको सव सम्पदाएँ प्राप्त हो सकती हैं ।

यहाँसे विहार कर सूर्यमित्र और अग्निभूति मुनिराज अग्निमन्दिर नामके पर्वत पर पहुँचे। वहाँ तपस्या द्वारा घातिया कर्मोंका नाशकर उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त किया, और

त्रिलोकपूज्य हो अन्तमें बाकीके कर्मोंका भी नाशकर पर
सुखमय, अक्षयानन्त मोक्ष लाभ किया। वे दोनों केव
ज्ञानी मुनिराज मुझे और आप लोगोंको उत्तम सुख
भीख दें।

अवन्ति देशके प्रसिद्ध उज्जैन शहरमें एक इन्द्रदत्त नाम
सेठ है। वह बड़ा धर्मात्मा और जिनभगवान्का सच्चा भ
है। उसकी स्त्रीका नाम गुणवती है। वह नामके अनुसा
सचमुच गुणवती और बड़ी सुन्दरी है। सोमशर्माका जीव,
जो अच्युत स्वर्गमें देव हुआ था वह, वहाँ अपनी आयु
पूरी कर पुण्यके उदयसे इस गुणवती सेठानीके सुरेन्द्रद
नामका सुशील और गुणी पुत्र हुआ। सुरेन्द्रदत्तका ब्या
उज्जैनहीमें रहनेवाले सुभद्रसेठकी लड़की यशोभद्राके साथ
हुआ। इनके घरमें किसी बातकी कमी नहीं थी। पुण्यके उदय-
से इन्हें सब कुछ प्राप्त था। इस लिए बड़े सुखके साथ इनके
दिन बीतते थे। ये अपनी इस सुख अवस्थामें भी धर्मको
न भूलकर सदा उसमें सावधान रहा करते थे।

एक दिन यशोभद्राने एक अवधिज्ञानी मुनिराजसे
पूछा—क्यों योगिराज, क्या मेरी आशा इस जन्ममें
सफल होगी? मुनिराजने यशोभद्राका अभिप्राय जानकर
कहा—हाँ होगी, और अवश्य होगी। तेरे होनेवाला पुत्र
भव्य—मोक्षमें जानेवाला, बुद्धिमान और अनेक अच्छे
अच्छे गुणोंका धारक होगा। पर साथ ही एक चिन्ताकी
बात यह होगी कि तेरे स्वामी पुत्रका मुख देखकर ही जिन-
दीक्षा ग्रहण कर जायँगे, जो दीक्षा स्वर्ग-मोक्षका सुख दे-

ाली है। अच्छा, और एक बात यह है कि तेरा पुत्र भी कभी किसी जैनमुनिको देख पायगा तो वह भी उसी य सब विषय-भोगोंको छोड़-छाड़कर योगी बन जायगा।

इसके कुछ महीनों बाद यशोभद्रा सेठानीके पुत्र हुआ। ाश्रीके जीवने, जो स्वर्गमें महर्द्धिक देव हुआ था, नी स्वर्गकी आयु पूरी हुए बाद यशोभद्राके यहाँ जन्म या। भाई-बन्धुओंने इसके जन्मका बहुत कुछ उत्सव नाया। इसका नाम सुकुमाल रक्खा गया। उधर सुरेन्द्र के पवित्र दर्शन कर और उसे अपने सेठ-पदका तिलक र आप मुनि हो गया।

जब सुकुमाल बड़ा हुआ तब उसकी माको यह चिन्ता ई कि कहीं यह भी कभी किसी मुनिको देखकर मुनि न हो ाय, इसके लिए यशोभद्राने अच्छे घरानेकी कोई बत्तीस न्दर कन्याओंके साथ उसका ब्याह कर उन सबके रहने- ो एक जुदा ही बड़ा भारी महल बनवा दिया और उसमें ब प्रकारकी विषय-भोगोंकी एकसे एक उत्तम वस्तु इकट्ठी रवादी, जिससे कि सुकुमालका मन सदा विषयोंमे फँसा हे। इसके सिवा पुत्रके मोहसे उसने इतना और किया कि अपने घरमें जैनमुनियोंका आना जाना भी बन्द करवा या।

एक दिन किसी बाहरके सौदागरने आकर राजा प्रद्योत- को एक बहु-मूल्य रत्न-कम्बल दिखलाया, इस लिए कि ह उसे खरीदले। पर उसकी कीमत बहुत ही अधिक होने- राजाने उसे नही लिया। रत्न-कंबलकी बात यशो-

भद्रा सेठानीको मालूम हुई। उसने उस सौदागरको बुला
कर उससे वह कम्बल सुकुमालके लिए मोल ले-लिया। प
वह रत्नोंकी जड़ाईके कारण अत्यन्त ही कठोर था, इस लिए
सुकुमालने उसे पसन्द न किया। तब यशोभद्राने उसके टुकड़े
करवा कर अपनी बहुओंके लिए उसकी जूतियाँ बनवादीं
एक दिन सुकुमालकी प्रिया जूतियाँ खोलकर पाँव धो रह
थी। इतनेमें एक चील मांसके टुकड़ेके लोभसे एक जूतीक
उठा ले-उड़ी। उसकी चोंचसे छूटकर वह जूती एक वेश्या
मकानकी छत पर गिरी। उस जूतीको देखकर वेश्याक
बड़ा आश्चर्य हुआ। वह उसे राजघरानेकी समझकर राजा
पास ले-गई। राजा भी उसे देखकर दंग रह गये। वि
इतनी कीमती जिसके यहाँ जूतियाँ पहरी जाती हैं तब उसके
धनका क्या ठिकाना होगा। मेरे शहरमें इतना भारी धन
कौन है? इसका अवश्य पता लगाना चाहिए। राजाने ज
इस विषयकी खोज की तो उन्हें सुकुमाल सेठका समाचा
मिला कि इनके पास बहुत धन है और वह जूती उनक
स्त्रीकी है। राजाको सुकुमालके देखनेकी बड़ी उत्कंठा हुई
वे एक दिन सुकुमालसे मिलनेको गये। राजाको अप
घर आये देख सुकुमालकी मा यशोभद्राको बड़ी खुशी हुई,
उसने राजाका खूब अच्छा आदर-सत्कार किया। राज
प्रेमवश हो सुकुमालको भी अपने पास सिंहासन पर बै
लिया। यशोभद्राने उन दोनोंकी एक ही साथ आरती उतार
दियेकी तथा हारकी ज्योतिसे मिलकर बढ़े हुए तेज
सुकुमालकी आँखें न सह सकीं—उनमें पानी आ गया

इसका कारण पूछने पर यशोभद्राने राजासे कहा—महाराज, आज इसकी इतनी उमर हो गई, कभी इसने रत्नमयी दीयेको छोड़कर ऐसे दीयेको नहीं देखा । इस लिए इसकी आँखोंमें पानी आ गया है । यशोभद्रा जब दोनोंको भोजन कराने बैठी तब सुकुमाल अपनी थालीमें परोसे हुए चावलोंमेंसे एक एक चावलको बीन-बीनकर खाने लगा । देखकर राजाको बड़ा अचंभा हुआ । उसने यशोभद्रासे इसका भी कारण पूछा । यशोभद्राने कहा—राजराजेश्वर, इसे जो चावल खानेको दिये जाते हैं वे खिले हुए कमलोंमें रखे जाकर सुगन्धित किये होते हैं। पर आज वे चावल थोड़े होनेसे मैंने उन्हें दूसरे चावलोंके साथ मिलाकर बना लिया। इससे यह एक एक चावल चुन-चुनकर खाता है। राजा सुनकर बड़े ही खुश हुए। उन्होंने पुण्यात्मा सुकुमालकी बहुत प्रशंसा कर कहा—सेठानीजी, अब तक तो आपके कुँवर साहब केवल आपके ही घरके सुकुमाल थे, पर अब मैं इनका अवन्ति-सुकुमाल नाम रखकर इन्हें सारे देशका सुकुमाल बनाता हूँ । मेरा विश्वास है कि मेरे देशभरमें इस सुन्दरताका—इस सुकुमारताका यही आदर्श है । इसके बाद राजा सुकुमालको संग लिए महलके पीछे जलक्रीड़ा करने बावड़ी पर गये । सुकुमालके साथ उन्होंने बहुत देरतक जलक्रीडा की । खेलते समय राजाकी उँगुलीमेंसे अँगूठी निकलकर क्रीड़ा सरोवरमें गिर गई । राजा उसे ढूँढ़ने लगे । वे जलके भीतर देखते हैं तो उन्हें उसमें हजारों बड़े बड़े सुंदर और कीमती भूषण देख पड़े । उन्हें देखकर राजाकी

अकल चकरा गई। वे सुकुमालके अनन्त-वैभवको देखकर बड़े चकित हुए। वे यह सोचते हुए, कि यह सब पुण्यकी लीला है, कुछ शरमिन्दासे होकर महल लौट आये।

सज्जनो, सुनो—धन-धान्यादि सम्पदाका मिलना, पुत्र मित्र, और सुन्दर स्त्रीका प्राप्त होना, बन्धु बान्धवोंका सुखी होना, अच्छे अच्छे वस्त्र और आभूषणोंका होना, दुमँजले तिमँजले आदि मनोहर महलोंमें रहनेको मिलना, खाने-पीनेको अच्छीसे अच्छी वस्तुएँ प्राप्त होना, विद्वान् होना, नीरोग होना—आदि जितनी सुख-सामग्री है, वह सब जिनेन्द्र भगवान्के उपदेश किये मार्ग पर चलनेसे जीवोंको मिल सकती है। इस लिए दुःख देनेवाले खोटे मार्गको छोड़कर बुद्धिमानोंको सुखका मार्ग और स्वर्ग-मोक्षके सुखका बीज पुण्य कर्म करना चाहिए। पुण्य जिन भगवान्की पूजा करनेसे पात्रोंको दान देनेसे तथा व्रत, उपवास, ब्रह्मचर्यके धारण करनेसे होता है।

एक दिन जैनतत्त्वके परम विद्वान् सुकुमालके मामा गणधराचार्य सुकुमालकी आयु बहुत थोड़ी रही जानकर उसके महल पीछेके बगीचेमें आकर ठहरे और चतुर्मास लग जानेसे उन्होंने वहीं योग धारण कर लिया। यशोभद्राको उनके आनेकी खबर हुई। वह जाकर उनसे कह आई कि प्रभो! जब तक आपका योग पूरा न हो तब तक आप कभी ऊँचेसे स्वाध्याय या पठन-पाठन न कीजिएगा। जब उनका योग पूरा हुआ तब उन्होंने अपने योगसम्बन्धी सब क्रियाओंको करके अन्तमें लोकप्रज्ञप्तिका पाठ करना शुरू किया।

ामें उन्होंने अच्युतस्वर्गके देवोंकी आयु, उनके शरीरकी
चाई आदिका खूब अच्छी तरह वर्णन किया। उसे सुनकर
कुमालको जातिस्मरण हो गया। पूर्व जन्ममें पाये दुःखोंको
ाद कर वह काँप उठा। वह उसी समय चुपकेसे महलसे
कल कर मुनिराजके पास गया और उन्हें भक्तिसे नम-
ार कर उनके पास बैठ गया। मुनिने उससे कहा—बेटा,
तुम्हारी आयु सिर्फ तीन दिनकी रह गई है, इस लिए अब
हें इन विषय-भोगोंको छोड़कर अपना आत्महित करना
चित है। ये विषय-भोग पहले कुछ अच्छेसे मालूम होते हैं,
इनका अन्त बड़ा ही दुःखदायी है। जो विषय-भोगोंकी
में ही मस्त रहकर अपने हितकी ओर ध्यान नहीं देते,
हें कुगतियोंके अनन्त दुःख उठाना पड़ते हैं। तुम समझो
याालेमें आग बहुत प्यारी लगती है, पर जो उसे छूएगा
तो जलेहीगा। यही हाल इन ऊपरके स्वरूपसे मनको
ानेवाले विषयोका है। इस लिए ऋषियोंने इन्हें 'भोगा
ंगभोगाभाः' अर्थात् सर्पके समान भयंकर कहकर
ख किया है। विषयोंको भोगकर आज तक कोई सुखी
ी हुआ, तब फिर ऐसी आशा करना कि इनसे सुख
ेगा, नितान्त भूल है। मुनिराजका उपदेश सुन-
सुकुमालको बड़ा वैराग्य हुआ। वह उसी समय
देनेवाली जिनदीक्षा लेकर मुनि हो गया। मुनि
र सुकुमाल वनकी ओर चल दिया। उसका यह
तम जीवन बड़ा ही करुणाके भरा हुआ है। कठोरसे
ोर चित्तवाले मनुष्योंके तक हृदयोंको हिला देनेवाला

है। सारी जिन्दगीमें कभी जिनकी आँखोंसे आँसू न झरे हे
उन आँखोंमें भी सुकुमालका यह जीवन आँसू ला देनेवाल
है। पाठकोंको सुकुमालकी सुकुमारताका हाल मालूम है कि
यशोभद्राने जब उसकी आरती उतारी थी, तब जो मंग
द्रव्य सरसों उस पर डाली गई थी, उन सरसोंके चुभनेव
भी सुकुमाल न सह सका था। यशोभद्राने उसके लिए रत्नों
का बहुमूल्य कम्बल खरीदा था, पर उसने उसे कठोर होने
ही ना-पास कर दिया था। उसकी माका उस पर इतना प्रे
था—उसने उसे इस प्रकार लाड़-प्यारसे पाला था कि सुकुमा
लको कभी जमीन पर तक पाँव देनेका मौका नहीं आय
था। उसी सुकुमार सुकुमालने अपने जीवन भरके ए
रूपसे बहे प्रवाहको कुछ ही मिनटोंके उपदेशसे बिलकुल
उलटा बहा दिया। जिसने कभी यह नहीं जाना कि घ
बाहर क्या है, वह अब अकेला भयंकर जंगलमें जा बसा
जिसने स्वप्नमें भी कभी दुःख नहीं देखा, वही अब दुःखों
पहाड़ अपने सिर पर उठालेनेको तैयार हो गया। सुकुमा
दीक्षा लेकर वनकी ओर चला। कँकरीली जमीन
चलनेसे उसके फूलोंसे कोमल पावोंमें कंकर-पत्थरोंके ग
नेसे घाव हो गये। उनसे खूनकी धारा बह चली।
धन्य सुकुमालकी सहनशीलता जो उसने उसकी
आँख उठाकर भी नहीं झाँका। अपने कर्त्तव्यमें
इतना एकनिष्ठ हो गया—इतना तन्मय हो गया कि
इस बातका भान ही न रहा कि मेरे शरीरकी क्या द
हो रही है। सुकुमालकी सहनशीलताकी इतनेमें ही समा

हीं हो गई । अभी और आगे बढ़िए और देखिए कि वह
ापनेको इस परीक्षामें कहाँ तक उत्तीर्ण करता है ।

पावोंसे खून बहता जाता है और सुकुमाल मुनि चले
ा रहे हैं । चलकर वे एक पहाड़की गुफामें पहुँचे । वहाँ
ध्यान लगाकर बारह भावनाओंका विचार करने लगे ।
न्होंने प्रायोपगमन संन्यास ले लिया, जिसमें कि किसीसे
ापनी सेवा-शुश्रूषा भी कराना मना किया है । सुकुमाल
नि तो इधर आत्मध्यानमें लीन हुए । अब जरा इनके
ायुभूतिके जन्मकी याद कीजिए ।

जिस समय वायुभूतिके बड़े भाई अग्निभूति मुनि हो गये
, तब इनकी स्त्रीने वायुभूतिसे कहा था कि देखो, तुम्हारे
ारणसे ही तुम्हारे भाई मुनि हो गये सुनती हूँ । तुमने
न्याय कर मुझे दुःखके सागरमें ढकेल दिया । चलो,
ब तक वे दीक्षा न ले जायँ उसके पहले उन्हें हम तुम
मझा-बुझाकर घर लौटा लावें । इस पर गुस्सा होकर
ायुभूतिने अपनी भौजीको बुरी-भली सुना डाली थी,
ौर फिर ऊपरसे उस पर लात भी जमा दी थी । तब उसने
ादान किया था कि पापी, तूने मुझे निर्बल समझ मेरा जो
पमान किया है—मुझे कष्ट पहुँचाया है, यह ठीक है
ि मैं इस समय इसका बदला नहीं चुका सकती । पर
ाद रख कि इस जन्ममें न तो परजन्ममें सही पर बदला
ूगी और घोर बदला लूँगी ।

इसके बाद वह मरकर अनेक कुयोनियोंमें भटकी ।
न्तमें वायुभूति तो यह सुकुमाल हुए और उसकी भौजी

सियारनी हुई। जब सुकुमाल मुनि वनकी ओर रवाना हुए और उनके पावोंमें कंकर, पत्थर, कॉटे वगैरह लगकर खून बहने लगा, तब यही सियारनी अपने पिल्लोंको साथ लिए उस खूनको चाटती चाटती वहीं आ गई जहाँ सुकुमाल मुनि ध्यानमें गुम हो रहे थे। सुकुमालको देखते ही पूर्वजन्मके संस्कारसे सियारनीको अत्यन्त क्रोध आया। वह उनकी ओर घूरती हुई उनके बिल्कुल नजीक आ गई। उसका क्रोधभाव उमड़ा। उसने सुकुमालको खाना शुरू कर दिया। उसे खाते देखकर उसके पिल्ले भी खाने लग गये। जो कभी एक तिनकेका चुभजाना भी नहीं सह सकता था, वह आज ऐसे घोर कष्टको सहकर भी सुमेरुसा निश्चल बना है, जिसके शरीरको एक साथ चार हिंसक जीव बड़ी निर्दयतासे खा रहे हैं, तब भी जो रंचमात्र हिलता-डुलना तक नहीं। उस महात्माकी इस अलौकिक सहनशक्तिका किन शब्दोंमें उल्लेख किया जाय, यह बुद्धिमें नहीं आता। तब भी जो लोग एक ना-कुछ चीज कॉटेके लग जानेसे तलमला उठते हैं, वे अपने हृदयमें जरा गंभीरताके साथ विचार कर देखें कि सुकुमाल मुनिकी आदर्श सहनशक्ति कहाँ तक बढ़ी चढ़ी है और उनका हृदय कितना उच्च है! सुकुमाल मुनिकी यह सहनशक्ति उन कर्त्तव्यशील मनुष्योंको अप्रत्यक्ष रूपसे शिक्षा कर रही है कि अपने उच्च और पवित्र कामोंमें आने वाले विघ्नोंकी परवा मत करो। विघ्नोंको आने दो और खूब आने दो। आत्माकी अनन्त शक्तियोंके सामने ये विघ्न कुछ चीज नहीं—किसी गिनतीमें नहीं। तुम अपने पर विश्वास

करो—भरोसा करो। हर एक कामोंमें आत्मदृढ़ता, आत्मविश्वास उनके सिद्ध होनेका मूलमंत्र है। जहाँ ये बातें नहीं वहाँ मनुष्यता भी नहीं। तब कर्त्तव्यशीलता तो फिर योजनोंकी दूरी पर है। सुकुमाल यद्यपि सुखिया जीव थे, पर कर्त्तव्यशीलता उनके पास थी। इसी लिए देखनेवालोंके भी हृदयको हिला देनेवाले कष्टमें भी वे अचल रहे।

सुकुमाल मुनिको उस सियारनीने पूर्ववैरके सम्बन्धसे तीन दिन तक खाया। पर वे मेरुके समान धीर रहे। दुःखकी उन्होंने कुछ पर्वा न की। यहाँ तक कि अपनेको खानेवाली सियारनी पर भी उनके बुरे भाव न हुए। शत्रु और मित्रको समभावोंसे देखकर उन्होंने अपना कर्त्तव्य पालन किया। तीसरे दिन सुकुमाल शरीर छोड़कर अच्युतस्वर्गमें महर्द्धिक देव हुए।

वायुभूतिकी भौजीने निदानके वश सियारनी होकर अपने वैरका बदला चुका लिया। सच है, निदान करना अत्यन्त दुःखोंका कारण है। इस लिए भव्यजनोंको यह पापका कारण निदान कभी नहीं करना चाहिए। इस पापके फलसे सियारनी मरकर कुगतिमें गई।

कहाँ वे मनको अच्छे लगनेवाले भोग और कहाँ यह दारुण तपस्या! सच तो यह है कि महापुरुषोंका चरित कुछ विलक्षण हुआ करता है। सुकुमाल मुनि अच्युतस्वर्गमें देव होकर अनेक प्रकारके दिव्य सुखोंको भोगते हैं और जिनभगवानकी भक्तिमें सदा लीन रहते हैं। सुकुमाल मुनिकी इस वीर मृत्युके उपलक्षमें स्वर्गके देवोंने आकर उनका बड़ा

उत्सव मनाया। 'जय जय' शब्द द्वारा महा कोलाहल हुआ इसी दिनसे उज्जैनमें महाकाल नामके कुतीर्थकी स्थापना हुई जिसके कि नामसे अगणित जीव रोज वहाँ मारे जाने लगे और देवोंने जो सुगन्ध जलकी वर्षा की थी, उससे नदी गन्धवती नामसे प्रसिद्ध हुई।

जिसने दिनरात विषय-भोगोंमें ही फँसे रहकर अपनी जिन्दगी बिताई, जिसने कभी दुःखका नाम भी न सुना उस महापुरुष सुकुमालने मुनिराज द्वारा अपनी तीन दिन आयु सुनकर उसी समय माता, स्त्री, पुत्र—आदि को धन-दौलतको, और विषय-भोगोंको छोड़-छाडकर जि दी लेली और अंतमें पशुओं द्वारा दुःसह कष्ट सहकर भी बड़ी धीरज और शान्तिके साथ मृत्युको अपनाया। सुकुमाल मुनि मुझे कर्त्तव्यके लिए कष्ट सहनेकी श प्रदान करें।